Pratidhwani the Echo
A Peer-Reviewed International Journal of Humanities & Social Science
ISSN: 2278-5264 (Online) 2321-9319 (Print)
Impact Factor: 6.28 (Index Copernicus International)
Volume-XII, Issue-III, April 2024, Page No.160-166
Published by Dept. of Bengali, Karimganj College, Karimganj, Assam, India
Website: http://www.thecho.in

मुक्तिबोध की कविता 'अंधेरे में': स्वप्न और आत्मसंघर्ष

डॉ. कस्तूरी चक्रवर्ती
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, कोकराझार गवर्नमेंट कॉलेज, कोकराझार, भारत

Abstract:

Gajanan Madhav Muktibodh is one of those few poets who have tried to understand the inter-relationship of individual and society in great depth. Therefore, in his poems one can visualize a conscious effort to know and understand the society through the individual rather than mere individuality.

In the diary of a literary person he has also said, why does representation arise within moments of Art? Why does the artist feel that his words are important to everyone? ... This happens because the coordination of the situation-free individuality of vision and the situation-bound individuality of sensation reaches a higher position than itself.

Gajanan Madhav Muktibodh, who created poems of self-realization, has experienced the ruthless struggle of life at the levels of realization and creation. Due to this, his poems resonate with the general meaning and express a broader meaning. At the centre, his experiences pledge with the problems of middle class society, their life and reality along with important points of contemporary history.

His poems clearly reflect the complex anxiety of situations as well as the disgust of loneliness. His poems are the living document of complex as well as historical experiences of present life, especially time and society. In fact, he is not a poet who is bound by the boundaries of growth and experiment for the sake of a new poetry, but is a poet who also transcends these boundaries.

Key Words: Life, reality, society and new poetry.

गजानन माधव मुक्तिबोध उन गिने – चुने कवियों में से एक है जो व्यक्ति और समाज के अन्तर्सम्बन्धों को बड़ी गहराई से समझने का प्रयास किये है। इसलिए उनकी कविताओं में कोरी व्यक्तिकता न होकर व्यक्ति के माध्यम से समाज को जानने, समझने की सचेष्टा दिखलाई पड़ती है। एक साहित्यिक की डायरी में उन्होंने कहा भी है कि 'कला के क्षणों के भीतर प्रतिनिधिकता क्यों उत्पन्न होती है? क्यों कलाकार को यह प्रतीत होता है कि उसकी बात सभी के लिए महत्त्वपूर्ण है? ...यह इसलिए होता है कि दृष्टि की स्थिति मुक्त वैयक्तिता और संवेदना की स्थिति-बद्ध वैयक्तिता का समन्वय अपने से उच्चतर स्थिति में पहुँच जाता है।'

आत्मसाक्षात्कार की कविताओं की सृष्टि करने वाले गजानन माधव मुक्तिबोध ने जीवन के कठोर संघर्ष को अनुभूति और निर्मित इन दोनों स्तरों पर भोगा है। इसके कारण उनकी कविताओं को सामान्य अर्थ में प्रतिध्वनित करके एक व्यापक अर्थ को व्यंजित करने वाली होती है। उनके अनुभवों के मूल में मध्यवर्गीय जीवन की समस्याओं तथा समकालीन इतिहास की प्रमुख बातें समाई हुई है। उनकी कविताओं में स्थितियों के जटिल तनाव के साथ-साथ अकेलेपन की भयानकता का स्पष्ट छाप है। उनकी कविताएं वर्तमान जीवन विशेषकर उनके समय और समाज के समग्र जटिल तथा ऐतिहासिक अनुभवों का जीवंत दस्तावेज़ है। वास्तव में वे प्रगति प्रयोग और नई कविता के सीमाओं में बंधने वाले कवि न होकर इनकी सीमाओं का अतिक्रमण करने वाले कवि है।

गजानन माधव मुक्तिबोध की कविताओं में उनकी संवेदना इतनी मुखर, जनतांत्रिक और व्यापक है कि वह किसी गाँव, नगर, देश, व्यक्ति या समाज में ही सीमित न रहकर कविता की एक नई संस्कृति को जन्म देती है । उनका काव्य एक समर्पित व्यक्ति का काव्य है । ऐसा इसलिए है क्योंकि उनकी कविताएं मानव मात्र के यातनापूर्ण जीवन के संघर्ष को अभिव्यक्त देने वाली हैं। उनमें जिन सामाजिक आदर्शों का संकेत किया गया है वे भूत अथवा वर्तमान पर आधारित न होकर भावी जीवन की ओर संकेत करने वाले है । अत: वे जिस यथार्थ को उद्घाटित करते है वह चाहे दिव्य या भव्य हो या न हो किन्तु प्रासंगिक अवश्य है। संवेदना की गहराई और अनुभूति की सघनता एवं नवीनता के कारण मुक्तिबोध जी एक साथ ऐसे प्रसंगों एवं संलिष्ट चित्रों को लेकर चलते है जो समकालीन समाज, जीवन और जगत् की गहनताओं से जुड़ा होता है। वह एक ऐसे संघर्षशील मनुष्य की कविता लिखते है जो अपने जीवन को रुदन, छटपटाहट एवं निरर्थक क्रोध में व्यतीत कर रहे है। इसलिए अपनी रचनाओं के माध्यम से वे हमको आशवस्त करने की अपेक्षा अविश्रांति की ओर उन्मुख करने वाले कवि कहे जा सकते है । अत: उनके शिल्प संवेदना भी तनावपूर्ण ही रहते है। इसलिए उनको प्राचीन या समकालीन आंदोलनों का आक्रामणात्मक कवि कहा जा सकता है।

"प्रत्येक पत्थर में
चमकता हीरा है
हर एक छाती में आत्मा अधीरा है
प्रत्येक सुस्मित में विमल सदानीरा है
प्रत्येक वाणी में
महाकाव्य पीड़ा है ।"[1]

गजानन माधव मुक्तिबोध के लिए साहित्य सिर्फ मनोरंजन या शब्द खेल नहीं है बल्कि एक गहन सामाजिक दायित्व भी है। अतएव वे समकालीन समाज को शिक्षित और जागरूक बनाने के लिए ही साहित्य सर्जन करते है। उनकी दृष्टि में हमारी सबसे बड़ी भूल यह है कि – 'राजनीति के पास समाज-सुधार का कोई कार्यक्रम न होना। साहित्यिक के पास सामाजिक सुधार का कोई कार्यक्रम न होना। सबने सोचा कि हम सामान्य बातें करके सिर्फ और एकमात्र राजनीतिक या साहित्यिक आंदोलन के जरिए वस्तुसथिति में परिवर्तन कर सकेंगे। फलत: सामाजिक सुधार का कार्य केवल अप्रत्यक्ष प्रभावों को सौंप दिया गया...।'

सामाजिक जीवन से इतने गहरे सरोकार रखने वाले कवि के लिए यह टिप्पणी उचित ही है कि – 'मुक्तिबोध की कविता 'अँधेरे में' में समकालीन भारतीय समाज की अनुगूंजे परिव्याप्त है ।' सामाजिक जीवन की रूढ़िवद्धता, विश्वासों की जड़ता, शिल्प और संरचनाओं की गतानुगतिकता, अनुभूतियों की परम्परावादिता, अहिंसात्मक आंदोलन की राजनैतिक असफलता और छायावादी काव्य की जीवनशून्य व्यक्तिवादी प्रवृत्ति, अंतराष्ट्रीय परिस्थितियों और मार्क्स दर्शन के बढ़ते प्रभाव के कारण जिस प्रगतिवादी साहित्य का उदय हुआ वहीं गजानन माधव मुक्तिबोध के कविताओं का भी मूल स्वर रहा । किन्तु छायावादी काव्य की व्यक्तिगत अंतर्मुखता और प्रगतिवाद की बहिर्मुखता की वास्तविक प्रतिक्रिया गजानन माधव मुक्तिबोध की कविताओं में परिलक्षित होती है ।

उनकी 'अँधेरे में' कविता को पहले नाम दिया था 'आशंका के द्वीप: अँधेरे में ।' 9 दिसंबर 1963 में उन्होंने अग्नेष्का सोनी को एक पत्र लिखा, जिसमें इस कविता के विषय में जिक्र किया है.....उसमें एक आशंका है, अँधेरी आशंका का वातावरण है – कहीं हमारे भारत में भी ऐसा-वैसा न हो । किन्तु कालान्तर में उन्होंने अपनी बीमारी के दौरान यह इच्छा व्यक्त की कि 'आशंका के द्वीप' हटा दिया जाए । इस कविता में उन्होंने कथानायक को 'वह' कहकर संबोधित किया है और ऐसे ही बदलते परिस्थिति के अंतर्गत गजानन माधव मुक्तिबोध की लम्बी कविता 'अंधेरे में' की कुछ पंक्तियां निम्नलिखित है –

"जिंदगी के...
कमरों में अंधेरे
लगाता है चक्कर
कोई एक लगातार
आवाज पैरों की देती है सुनाई
बार-बार... बार-बार,
वह नहीं दीखता... नहीं ही दीखता,
किंतु वह रहा धूल
तिलस्मी खोह में गिरफ्तार कोई एक ।"[2]

यह 'कोई एक' क्रांतिधर्मी पुरूष है जिसके लिए सर्वनाम 'वह' का प्रयोग हुआ है। 'वह' की लड़ाई सामाजिक न्याय और समानता के लिए है । किन्तु मध्यवर्ग भीरू प्रकृति का है इसलिए वह 'वह' नहीं पहचान पाता और उसका ऐहसास 'कोई एक' के रुप में अपने अवचेतन में करता है। इसके अलावा पूंजीवादी समाज में एक आम आदमी की निजी संभावनाएं, उसके प्रभाव और प्रतिभाएं प्राय: अवरूद्ध ही रहती है। यह तत्त्व गजानन माधव मुक्तिबोध की जिंदगी में एक कड़वे अनुभवों का ऐहसास के रुप में प्रकट हुआ था और अँधेरे में कविता में भी इसकी अनुभूति है । जैसे –

'किन्तु, वह फटे हुए वस्त्र क्यों पहने है?

उसका स्वर्ण-वर्ण मुख मैला क्यों ?
वक्ष पर इतना बड़ा घाव कैसे हो गया?
उसने कारावास-दुख झेला क्यों ?'

'अंधेरे में' गजानन माधव मुक्तिबोध रचित एक ऐसे संघर्षशील मनुष्य की कविता है जो अपने जीवन के रुदन, छटपटाहट एवं निरर्थक क्रोध में व्यतीत कर रहा है। वह क्रांति का आकांक्षी किन्तु क्रांति के लिए जिस मानसिक शक्ति की आवश्यक्ता होती है उसकी कमी वह अपने में महसूस करते है। फलत: वह 'अंधेरे में' कविता मनोद्वंद की विभिन्न पहलुओं को प्रतीकों, बिम्बों व फैंटेंसी के माध्यम से अभिव्यक्त करने में सफल रहे है। संवेदना और शिल्प दोनों दृष्टिकोणों से इस कविता में मुक्तिबोध जी की रचनात्मकता शिखर को छूती हुई प्रतीत होती है क्योंकि यह रचना नई कविता के कालखण्ड में आत्मसंघर्ष और युगसंघर्ष की चरम परिणति है। इस कविता में कवि जितनी बारीकी से अन्तर्चेतना के संसार को खोलता है उतनी ही सफाई से बाह्य जगत की विसंगतियों का द्वंद्वात्मक आख्यान करता है।

इस कविता में कवि के अंतर द्वंद मानस का अंत: संघर्ष भाव प्रतिबिम्बत हुआ है। कवि का यह अंत: संघर्ष व्यष्टिपरक और समष्टिपरक दोनों रुपों में सम्भव जान पड़ता है। इस अंत: संघर्ष में कवि ने द्वंदात्मकता सुख-दुख, आशा-निराशा, राग-द्वेष आदि पक्षों को दोनों रुपों में निरुपण करने का प्रयास किया है, कवि इस अंतर द्वंदात्मक मन: स्थिति का चित्रण करने के लिए कविता में प्रतीकात्मकता का प्रयोग किया है। कवि ने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए इसमें फैंटेसी का सफल प्रयोग किया है। फैटेंसी मूर्त से अमूर्त की ओर अग्रसर होने की प्रक्रिया एवं चेतन और अवचेतन मन में घटित होने वाली घटनाओं से संबंधित है। मुक्तिबोध जी ने 'अँधेरे में' कविता को प्रतीकात्मक रूप में चित्रित किया है। उनकी भाषा बिम्बों की भाषा है। वह अपनी काव्याभिव्यक्ति को बिम्बों के माध्यम से दृश्य और ऐन्द्रिय बनाकर प्रस्तुत करते है जिससे पाठक कवि की जटिल संवेदना को सहजता से ग्रहण कर लेता है। लेकिन नई कविता की तरह उनके बिम्ब गढ़े हुये नहीं है बल्कि प्रकृति से जो भी चुने गए है अनगढ़, रूक्ष सुनसान प्रकृति को ही महत्त्व दिया गया है। अपने कृति 'एक साहित्यिक की डायरी' के तीसरा क्षण में वह फैंटेसी के संबंध में लिखते है –

'कला का पहला क्षण है जीवन का उत्कट तीव्र अनुभव क्षण। दूसरा क्षण है इस अनुभव का अपने कसकते दुखते हुये मूलों से पृथक हो जाना और एक ऐसी फैंटेसी का रुप धारण कर लेना मानो वह फैंटेसी अपने आँखों के सामने ही खड़ी हो। तीसरा और अंतिम क्षण है इस फैंटेसी के शब्दबद्ध होने की प्रक्रिया का आरंभ और उस प्रक्रिया की परिपूर्णावस्था तक की गतिमानता। शब्दबद्ध होने की प्रक्रिया के भीतर जो प्रवाह बहता रहता है वह समस्त व्यक्तित्व और जीवन का प्रवाह होता है। प्रवाह में वह फैंटेसी अनवरत रूप से विकसित और परिवर्तित होती हुई आगे बढ़ती जाती है। इस प्रकार वह फैंटेसी अपने मूल रूप को बहुत कुछ त्यागती हुई नवीन रूप धारण कर लेती है। .....फैंटेसी को शब्दबद्ध करने की प्रक्रिया के दौरान

जो-जो सृजन होता है – जिसके कारण कृति क्रमश: विकसित होती जाती है – वही कला का तीसरा और अन्तिम क्षण है।'

स्वयं गजानन माधव मुक्तिबोध की जिन्दगी अभावों और दुखों की जिन्दगी रही। वे विचारों से मार्क्सवादी थे, शोषित वर्ग की पीड़ा उनकी खुद की पीड़ा थी। जब पूंजीवाद समूचे विश्व को अपने खूनी पंजों में जकड़ लेने के लिए लगातार बढ़ता जा रहा हो, जब फांसीवादी शक्तियां एवं न्याय स्वतंत्रता को निगल जाने के लिए कटिबद्ध हो तब मानवीय एहसास की त्रासदी को जीने के लिए मानवतावादी कवि के समक्ष अंधकार के सिवाय भला और क्या हो सकता है ? 'अँधेरे में' कविता में इसी षडयंत्रकारी अंधकार का दर्शन होता है।

प्रस्तुत कविता में कवि ने बताना चाहा है कि जिन्दगी के कमरों में अंधेरा छाया हुआ है और उसी अंधेरे में कोई व्यक्ति लगातार चक्कर लगा रहा है जैसे वह अंधेरे में कैद हो, बैचेन हो। वास्तव में काव्य नायक के चेतन मस्तिष्क को अपना अवचेतन ही अंधेरे कमरे या गुफा जैसा प्रतीत होता है। चेतन और अवचेतन के बीच दीवार है और वह रहस्यमय व्यक्ति दीवार के उस पार चहल कदमी कर रहा है। इस प्रकार कविता का सांचा प्रारंभ से ही मनोविश्लेषणात्मक है। अवचेतन मस्तिष्क के 'कारण-कार्य' की प्रक्रिया स्पष्ट नहीं होती। इसलिए उसे तिलस्मी कहा गया है लेकिन एक अर्थ स्तर ऐसा भी है जिसके धरातल पर कविता बाहर की तरफ खुलती है – पूंजीवादियों के खिलाफ क्रांति का व्रत लेने वाले लोग प्राय: छापामार युद्ध में संलग्न होते है किन्तु उनके निवास को तिलस्मी खोह ही कहा जा सकता है, ऐसे भूमिगत लोगों का संबद्ध बाह्य संसार से प्राय: कटा-कटा सा रहता है। उनकी अभिव्यक्ति बाधित होती है इसलिए भी खोह की चरितार्थता सिद्ध होती है। इस प्रकार यह कविता जितनी अंदर की तरफ मनोविश्लेषणात्मक धरातल पर खुलती है उतनी बाहर की तरफ मार्क्सवादी जमीन पर खुलती है।

गजानन माधव मुक्तिबोध की काव्य चेतना का मूलाधार है – मानवीय संवेदना। वे जीवन-पर्यन्त एक ही समस्या को लेकर चिन्तित थे –

"मेरे सभ्य नगरों और ग्रामों में
सभी मानव
सुखी, सुन्दर व शोषण-मुक्त कब होंगे।।"[3]

उनकी कविताओं में पहली बार निम्नमध्यवर्ग के जीवन का समग्र चित्रण हुआ है। विशेषकर निम्नमध्यवर्ग के व्यक्ति के आदर्श और यथार्थ में होने वाला संघर्ष ही उनकी कविता का केन्द्रीय विषय है। जैसे –

"विशाल श्रमशीलता की जीवन्त
मूर्तियों के चेहरों पर
झुलसी हुई आत्मा की अनगिन लकीरें।

मुझे जकड़ लेती हैं अपने में, अपना सा जानकर ।"[4]

'अँधेरे में' शीर्षक कविता के प्रारंभ में उन्होंने जिस रहस्यात्मक नाटकीयता की सृष्टि की है, ब्रह्मराक्षस में उन्होंने मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी की जागृत चेतना की जिस विवशता, असफलता तथा नपुंसक क्रोध को वाणी दी है, वह केवल मुक्तिबोध जी की अनुभूति न होकर पूरे समय समाज और देश एवं काल की अनुभूति के रूप में बदल गई है । इसका कारण यह है कि स्थानान्तर गामी प्रवृत्ति पर बहुत जोर दिया है । उनका कहना था कि यदि आज के वैविध्यमय उलझन से भरे रंग-बिरंगे जीवन को देखना हो तो अपने वैयक्तिक क्षेत्र से निकलकर एक बार बाहर जाना ही होगा । अपने इसी दृष्टिकोण के कारण वे काव्य सृजन को कोई अचेतन व्यापार न मानकर अनुभूति जन्य में निर्मित फैंटेसी की ऐसी शाब्दिक अभिव्यक्ति मानते थे जो भाषाओं की सीमाओं के साथ व्यक्ति के निजी संस्कार, विचार और अभिव्यक्ति क्षमता से निरंतर प्रभावित होती रहने के कारण बदले हुए रूप में उपस्थित होती है । तीसरा क्षण शीर्षक वैचारिक निबंध में उन्होंने ह्दय की तुलना सरोवर के साथ करते हुए जो कुछ कहा है उससे स्पष्ट होता है कि वे यह मानकर चलते थे कि उन्हें जिस अस्मिता की तलाश है वह किसी तिलस्मी खोह में गिरफ्तार है । उनको अपने पैरों की आवाज़ सुनाई तो देती है किन्तु सहसा वह उनको दिखाई नहीं पड़ता । इस प्रकार एक स्थान पर मानो ह्दय की जटिलता को एक प्राकृतिक गुहा के बिम्ब द्वारा रूपायित किया गया है –

"भूमि की सतहों के बहुत नीचे / अँधियारी एकान्त / प्राकृत गुहा एक ।
विस्तृत खोह के साँवले तल में / तिमिर को भेदकर चमकते हैं पत्थर ।"[5]

कवि ने बिम्बों और प्रतीकों द्वारा भी कथ्य को सम्प्रेषित करने का प्रयास किया है। उदाहरण स्वरुप कविता में फूले हुए पलस्तर की पपड़ियाँ, चूने भरी रेत, मध्यवर्गीय जीवन की निस्वार्थ मान्यताओं, प्राणहीन रुढ़ियों के प्रतीक है, इनके आवरण के उस पार क्रांतिधर्मी चेतना है, यह चेतना मुक्तिकामी है । इसी क्रांतिधर्मी चेतना की गतिशीलता से कवि ने रुढ़ियों के दीवार को टूटते हुए दिखाया है।

पूंजीवादी समाज में एक मध्यवर्गीय व्यक्ति अपने को बंधनयुक्त पाता है। इसलिए उसकी महत्त्वाकांक्षाएं उसके अन्तर्मन के ही किसी कोने में दबी-कुचली रह जाती है। वह अपने को कभी सम्पूर्ण नहीं मान पाता । यही भावना के कारण क्रांति पुरुष शोषित वर्ग की अन्तरंग अभिव्यक्ति है। इसलिए 'अँधेरे में' कविता में ही 'वाचक नायक मय' क्रांति पुरुष 'वह' को देखकर उसने अपनी परिपूर्ण अवस्था का आर्विभाव महसूस करता है । शोषित या सर्वहारा वर्ग की प्रतिभा, ऐश्वर्य एवं उसके व्यक्तित्व विकास की सम्भावनाओं पर पूंजीवादी वर्ग का पहरा या अकुंश लगा होने से वह क्रांतिपुरुष के माध्यम से ही निजी सम्भावनाओं की तलाश करता है।

गजानन माधव मुक्तिबोध की कविता का कथ्य मूल रूप से आत्मद्वन्द्व एवं संघर्ष से संबंधित है । यह आत्मद्वन्द्व रुमानी नहीं है बल्कि व्यक्ति में घटित होता है। जिसका कारण है उसका सामाजिक परिवेश और उसकी शोषित स्थिति।

उक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि 'अंधेरे में' कविता का मूल कथ्य एक आत्मचेतस व्यक्ति की अपनी मुक्ति की खोज है और वह किसी व्यापकतर सत्ता में विलीन होने में ही अपनी सार्थकता समझता है । यह कविता खोज से आरंभ होती है और खोज से समाप्त होती हुई भी अन्तहीन ही रहती है ।

संदर्भ ग्रंथ:

1) डॉ. राजेश शर्मा – अँधेरे में, अशोक प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण – 2000, पृ. सं. – 8
2) वही, पृ. सं. – 50
3) वही, पृ. सं. – 7
4) वही, पृ. सं. – 8
5) वही, पृ. सं. – 22-23